— श्रीमद् राजचन्द्र विरचित —

आत्मसिद्धि शास्त्र

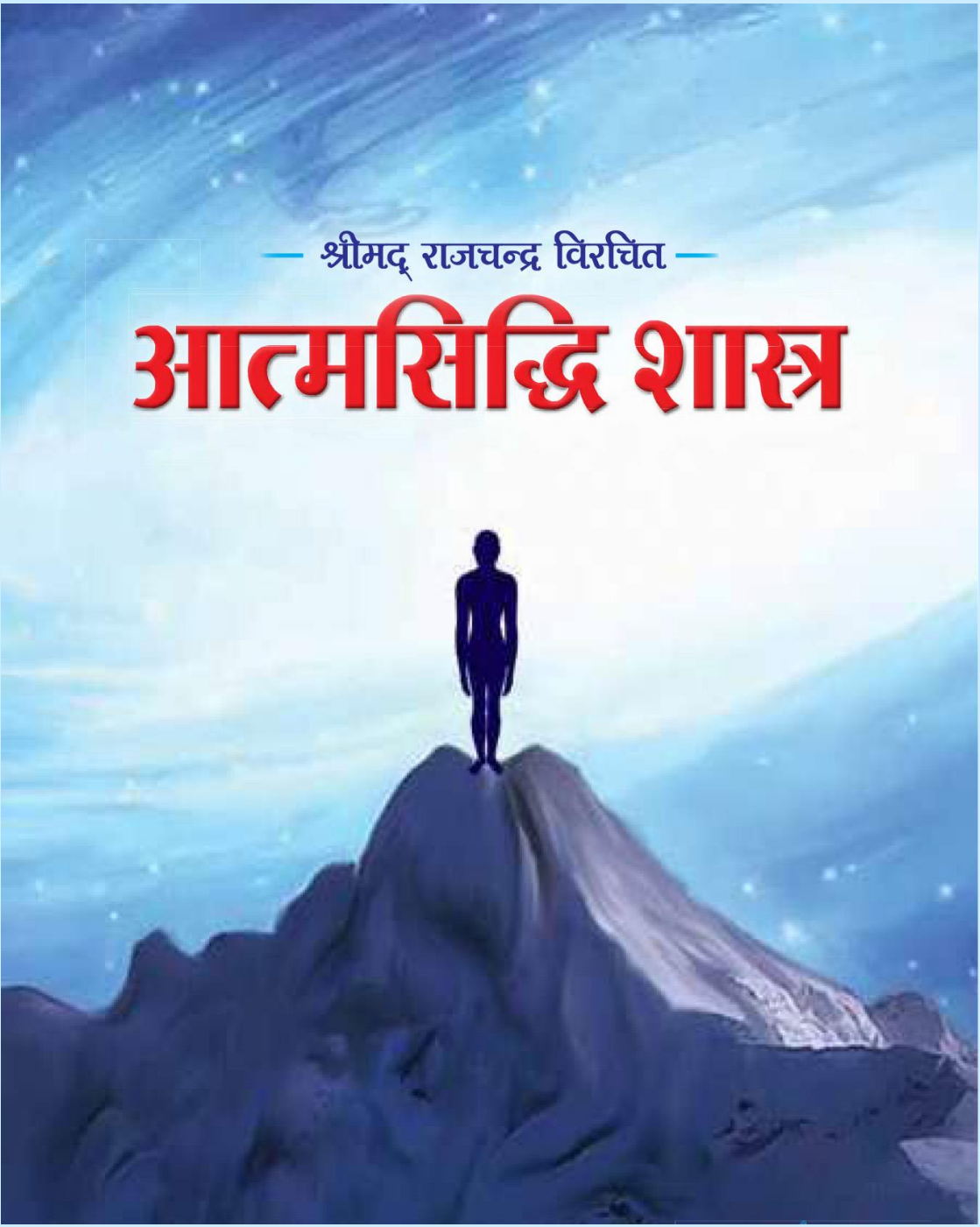

जे स्वरुप समज्या विना, पाम्यो दुःख अनंत;
समजाव्युं ते पद नमुं, श्री सद्गुरु भगवंत ।१।

वर्तमान आ कालमां मोक्षमार्ग बहु लोप;
विचारवा आत्मार्थीने, भाख्यो अत्र अगोप्य ।२।

कोई क्रियाजड थई रह्या, शुष्कज्ञानमां कोई;
माने मारग मोक्षनो, करुणा उपजे जोई ।३।

बाह्य क्रियामां राचता, अंतर भेद न काई;
ज्ञानमार्ग नीषेधता, तेह क्रियाजड आई ।४।

बंध मोक्ष छे कल्पना, भाखे वाणी मांहि;
वर्ते मोहावेशमां, शुष्क ज्ञानी ते आहि ।५।

वैराग्यादि सफल तो, जो सह आतमज्ञान;
तेमज आतमज्ञाननी प्राप्तितणां निदान ।६।

त्याग विराग न चित्तमां, थाय न तेने ज्ञान;
अटके त्याग विरागमां, तो भूले निज भान ।७।

ज्यां ज्यां जे जे योग्य छे, तहां समजवुं तेह;
त्यां त्यां ते ते आचरे, आत्मार्थी जन एह ।८।

सेवे सद्गुरु चरणने, त्यागी दई निजपक्ष;
पामे ते परमार्थने, निजपदनो ले लक्ष ।९।

आत्मज्ञान समदर्शिता, विचरे उदयप्रयोग;
अपूर्व वाणी परमश्रुत, सद्गुरु लक्षण योग्य ।१०।

प्रत्यक्ष सद्गुरु सम नहीं, परोक्ष जिन उपकार;
एवो लक्ष्य थया विना, उगे न आत्मविचार ।११।

सद्गुरुना उपदेश वण, समजाय न जिनरुप;
समज्या वण उपकार शो समज्ये जिनस्वरुप ।१२।

आत्मादी अस्तित्वनां, जेह निरुपक शास्त्र;
प्रत्यक्ष सद्गुरु योग नहि, त्यां आधार सुपात्र ।१३।

अथवा सद्गुरु ए कह्या, जे अवगाहन काज;
ते ते नित्य विचारवा, करी मतांतर त्याज ।१४।

रोके जीव स्वच्छंद तो, पामे अवश्य मोक्ष;
पाम्या एम अनंत छे, भाख्युं जिन निर्दोष ।१५।

प्रत्यक्ष सद्गुरु योगथी, स्वच्छंद ते रोकाय;
अन्य उपाय कर्या थकी, प्रायें बमणो थाय ।१६।

स्वच्छंद मत आग्रह तजी, वर्ते सद्गुरु लक्ष;
समकित तेने भाखियुं, कारण गणी प्रत्यक्ष ।१७।

मानादिक शत्रु महा, निज छंदे न मराय;
जातां सद्गुरु शरणमां, अल्प प्रयासे जाय ।१८।

जे सद्गुरु उपदेश थी, पाम्यो केवळज्ञान;
गुरु रह्या छद्मस्थ पण, विनय करे भगवान ।१९।

एवो मार्ग विनयतणो, भाख्यो श्री वीतराग;
मूळ हेतु ए मार्गनो, समजे कोई सुभाग्य ।२०।

असद्गुरु ए विनयनो लाभ लहे जो कांई;
महामोहिनी कर्मथी, बुडे भवजळमांहि ।२१।

होय मुमुक्षु जीव ते, समजे एह विचार;
होय मतार्थि जीव ते, अवळो ले निर्धार ।२२।

होय मतार्थि तेहने, थाय न आतमलक्ष;
तेह मतार्थि लक्षणो, अहीं कह्या निर्पक्ष ।२३।

मतार्थि लक्षण (गाथा २४-३३)

बाह्य त्याग पण ज्ञान नही, ते माने गुरु सत्य;
अथवा निजकुळधर्मना, ते गुरुमां ज ममत्व ।२४।

जे जिनदेहप्रमाण ने, समवसरणादि सिद्धि;
वर्णन समजे जिननुं, रोकि रहे निजबुद्धि ।२५।

प्रत्यक्ष सद्गुरु योगमां, वर्त्ते द्रष्टि विमुख;
असद्गुरुने द्रढ करे, निज मानार्थे मुख्य ।२६।

देवादी गति भंगमां, जे समजे श्रुतज्ञान;
माने निजमत वेषनो, आग्रह मुक्ति निदान ।२७।

लह्युं स्वरुप न वृत्तिनुं, ग्रह्युं व्रत अभिमान;
ग्रहे नहीं परमार्थने, लेवा लौकिक मान ।२८।

अथवा निश्चय नय ग्रहे, मात्र शब्दनी मांय;
लोपे सद्व्यवहारने, साधन रहीत थाय ।२९।

ज्ञानदशा पामे नहीं, साधन दशा न कांई;
पामे तेनो संग जे, ते बुडे भवमांहि ।३०।

ए पण जीव मतार्थमां, निजमानादी काज;
पामे नहीं परमार्थने, अन अधिकारीमाज ।३१।

नहि कषाय उपशांतता, नहि अंतर वैराग्य;
सरळपणुं न मध्यस्थता, ए मतार्थि दुर्भाग्य ।३२।

लक्षण कह्यां मतार्थिना, मतार्थ जावा काज;
हवे कहुं आत्मार्थिना, आत्मअर्थ सुखसाज ।३३।

आत्मार्थि लक्षण (गाथा ३४-४२)

आत्म ज्ञान त्यां मुनिपणुं, ते साचा गुरु होय;
बाकी कुळ गुरु कल्पना, आत्मार्थि नहि जोय ।३४।

प्रत्यक्ष सद्गुरु प्राप्तिनो, गणे परम उपकार;
त्रणे योग एकत्वथी, वर्त्ते आज्ञा धार ।३५।

एक होय त्रण काळमां, परमारथनो पंथ;
प्रेरे ते परमार्थने, ते व्यवहार समंत ।३६।

एम विचारी अंतरे, शोधे सद्‌गुरु योग;
काम एक आत्मार्थनुं, बीजो नहि मनरोग ।३७।

कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्ष अभिलाष;
भवे खेद प्राणीदया, त्यां आत्मार्थ निवास ।३८।

दशा न एवी ज्यां सुधी, जीव लहे नहि जोग;
मोक्षमार्ग पामे नहीं, मटे न अंतर रोग ।३९।

आवे ज्यां एवी दशा, सद्‌गुरुबोध सुहाय;
ते बोधे सुविचारणा, त्यां प्रगटे सुखदाय ।४०।

ज्यां प्रगटे सुविचारणा, त्यां प्रगटे निजज्ञान;
जे ज्ञाने क्षय मोह थई, पामे पद निर्वाण ।४१।

उपजे ते सुविचारणा, मोक्षमार्ग समजाय;
गुरु शिष्य संवादथी, भाखुं षट्‌पद आंहि ।४२।

छह पद (गाथा ४३-४४)

आत्मा छे ते नित्य छे, छे कर्ता निजकर्म;
छे भोक्ता वळि मोक्ष छे, मोक्ष उपाय सुधर्म ।४३।

षट् स्थानक संक्षेपमां, षट् दर्शन पण तेह;
समजावा परमार्थने, कह्यां ज्ञानीये एह ।४४।

१. आत्मा है।

शंका-शिष्य उवाच (गाथा ४५-४८)

नथी द्रष्टि मां आवतो, नथी जणातुं रुप;
बीजो पण अनुभव नहीं, तेथि न जीवस्वरुप ।४५।

अथवा देह ज आत्मा, अथवा इंद्रिय, प्राण;
मिथ्या जूदो मानवो, नहिं जूदुं एंधाण ।४६

वळि जो आत्मा होय तो, जणाय ते नहिं केम?
जणाय जो ते होय तो, घट पट आदी जेम ।४७।

माटे छे नहिं आतमा, मिथ्या मोक्ष उपाय;
ए अंतर शंका तणो समजावो सदुपाय ।४८।

समाधान-सद्गुरु उवाच (गाथा ४९-५८)

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देह समान;
पण ते बन्ने भिन्न छे, प्रगट लक्षणे भान ।४९।

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देह समान;
पण ते बन्ने भिन्न छे, जेम असी ने म्यान ।५०।

जे द्रष्टा छे द्रष्टिनो, जे जाणे छे रुप;
अबाध्य अनुभव जे रहे, ते छे जीवस्वरुप ।५१।

छे इंद्रिय प्रत्येकने निज निज विषयनुं भान;
पांच इंद्रिना विषयनुं, पण आत्माने भान ।५२।

देह न जाणे तेहने, जाणे न इंद्रि प्राण;
आत्मानी सत्ता वडे, तेह प्रवर्त्ते जाण ।५३।

सर्व अवस्थाने विषे, न्यारो सदा जणाय;
प्रगट रुप चैतन्यमय, ए एंधाण सदाय ।५४।

घट, पट आदी जाण तुं, तेथी तेने मान;
जाणनार ते मान नहि, कहिये केवुं ज्ञान? ।५५।

परमबुद्धि कृष देहमां, स्थूळ देह मति अल्प;
देह होय जो आतमा, घटे न आम विकल्प ।५६।

जड चेतननो भिन्न छे, केवळ प्रगट स्वभाव;
एक पणुं पामे नहीं, त्रणे काळ द्वय भाव ।५७।

आत्मानी शंका कर, आत्मा पोते आप;
शंकानो करनार ते, अचरज एह अमाप ।५८।

२. आत्मा नित्य है।
शंका-शिष्य उवाच (गाथा ५९-६१)

आत्मानां अस्तित्वना, आपे कह्या प्रकार;
संभव तेनो थाय छे, अंतर कर्ये विचार ।५९।

बीजी शंका थाय त्यां, आत्मा नहीं अविनाश;
देह योगथी ऊपजे, देह वियोगे नाश ।६०।

अथवा वस्तु क्षणीक छे, क्षणे क्षणे पलटाय;
ए अनुभवथी पण नहीं, आत्मा नित्य जणाय ।६१।

समाधान-सद्गुरु उवाच (गाथा ६२-७०)

देह मात्र संयोग छे, वळि जड, रुपी द्रश्य;
चेतननां उत्पत्ति लय, कोना अनुभव वश्य?।६२।

जेना अनुभव वश्य ए, उत्पन्न लयनुं ज्ञान;
ते तेथी जूदा विना, थाय न केमें भान ।६३।

जे संयोगो देखिये, ते ते अनुभव द्रश्य;
उपजे नहि संयोगथी, आत्मा नित्य प्रत्यक्ष ।६४।

जडथी चेतन ऊपजे, चेतनथी जड थाय;
एवो अनुभव कोईने, क्यारे कदी न थाय ।६५।

कोई संयोगोथी नहीं, जेनी उत्पत्ति थाय;
नाश न तेनो कोईमां, तेथी नित्य सदाय ।६६।

क्रोधादी तरतम्यता, सर्पादिक नी मांय;
पूर्वजन्म संस्कार ते, जीव नित्यता त्यांय ।६७।

आत्मा द्रव्ये नित्य छे, पर्याये पलटाय;
बाळादी वय त्रण्यनुं, ज्ञान एकने थाय ।६८।

अथवा ज्ञान क्षणीकनुं, जे जाणी वदनार;
वदनारो ते क्षणिक नहि, कर अनुभव निर्धार ।६९।

क्यारे कोई वस्तुनो, केवळ होय न नाश;
चेतन पामे नाश तो, केमां भळे तपास ।७०।

३. आत्मा अपने कर्म का कर्त्ता है।

शंका-शिष्य उवाच (गाथा ७१-७३)

कर्त्ता न जीव कर्मनो, कर्म ज कर्त्ता कर्म;
अथवा सहज स्वभाव कां, कर्म जीवनो धर्म ।७१।

आत्मा सदा असंग ने, करे प्रकृति बंध;
अथवा ईश्वर प्रेरणा, तेथी जीव अबंध ।७२।

माटे मोक्ष उपायनो, कोई न हेतु जणाय;
कर्मतणुं कर्त्ता पणुं, कां नहि, कां नहि जाय ।७३।

समाधान-सद्गुरु उवाच (गाथा ७४-७८)

होय न चेतन प्रेरणा, कोण ग्रहे तो कर्म
जड स्वभाव नहि प्रेरणा, जुओ विचारी धर्म ।७४।

जो चेतन करतुं नथी, नथी थतां तो कर्म;
तेथी सहज स्वभाव नहि, तेमज नहि जीवधर्म ।७५।

केवळ होत असंग जो, भासत तने न केम?
असंग छे परमार्थथी, पण निज भाने तेम ।७६।

कर्त्ता ईश्चर कोई नहि, ईश्वर शुद्ध स्वभाव;
अथवा प्रेरक ते गण्ये, ईश्वर दोष प्रभाव ।७७।

चेतन जो निज भानमां, कर्त्ता आप स्वभाव;
वर्त्ते नहि निजभानमां, कर्त्ता कर्म प्रभाव ।७८।

४. आत्मा अपने कर्म का भोक्त्ता है।
शंका-शिष्य उवाच (गाथा ७९-८१)

जीव कर्म कर्त्ता कहो, पण भोक्ता नहि सोय;
शुं समझे जड कर्म के, फळपरिणामी होय ।७९।

फळदाता ईश्वर गण्ये, भोक्तापणुं सधाय;
एम कह्ये ईश्वरतणुं, ईश्वरपणुं ज जाय ।८०।

ईश्वर सिद्ध थया विना, जगत्नियम नहि होय;
पछी शुभाशुभ कर्मनां, भोग्यस्थान नहिं कोय ।८१।

समाधान-सद्गुरु उवाच (गाथा ८२-८६)

भावकर्म निजकल्पना, माटे चेतनरुप;
जीववीर्यनी स्फूरणा, ग्रहण करे जडधूप ।८२।

झेर सुधा समजे नही, जीव खाय फळ थाय;
एम शुभाशुभ कर्मनुं, भोक्तापणुं जणाय ।८३।

एक रांक ने एक नृप, ए आदी जे भेद;
कारण विना न कार्य ते, ते ज शुभाशुभवेध ।८४।

फळदाता ईश्वरतणी, एमां नथी जरुर;
कर्म स्वभावे परिणमें, थाय भोगथी दूर ।८५।

ते ते भोग्य विशेषना, स्थानक-द्रव्य स्वभाव;
गहन वात छे शिष्य आ. कहि संक्षेपे साव ।८६।

५. आत्मा का मोक्ष है।

शंका-शिष्य उवाच (गाथा ८७-८८)

कर्त्ता भोक्ता जीव हो, पण तेनो नहि मोक्ष;
वीत्यो काळ अनंत पण, वर्तमान छे दोष ।८७।

शुभ करे फळ भोगवे, देवादी गतिमांय;
अशुभ करे नर्कादि फळ, कर्म रहीत न क्यांय ।८८।

समाधान-सद्गुरु उवाच (गाथा ८९-९१)

जेम शुभाशुभ कर्मपद, जाण्यां सफळ प्रमाण;
तेम निवृत्ति सफळता, माटे मोक्ष सुजाण ।८९।

वीत्यो काळ अनंत ते, कर्म शुभाशुभ भाव;
तेह शुभाशुभ छेदता, उपजे मोक्ष स्वभाव ।९०।

देहादिक संयोगनो, आत्यंतिक वियोग;
सिद्ध मोक्ष शाश्वत पदे, निज अनंत सुख भोग ।९१।

६. आत्मा के मोक्ष का उपाय है।
शंका-शिष्य उवाच (गाथा ९२-९६)

होय कदापी मोक्षपद, नहि अविरोध उपाय;
कर्मो काळ अनंतनां, शाथी छेद्यां जाय?।९२।

अथवा मत दर्शन घणां, कहे उपाय अनेक;
तेमा मत साचो कयो, बने न एह विवेक ।९३।

कयी जातिमां मोक्ष छे, कया वेषमां मोक्ष;
एनो निश्चय ना बने, घणा भेद ए दोष ।९४।

तेथी एम जणाय छे, मळे न मोक्ष उपाय;
जीवादी जाण्या तणो, शो उपकार ज थाय?।९५।

पांचे उत्तरथी थयुं, समाधान सर्वांग;
समजुं मोक्ष उपाय तो, उदय उदय सद्‌भाग्य ।९६।

समाधान-सद्‌गुरु उवाच (गाथा ९७-११८)

पांचे उत्तरनी थई, आत्मा विषे प्रतीत;
थाशे मोक्षोपायनी, सहज प्रतित ए रीत ।९७।

कर्म-भाव अज्ञान छे, मोक्षभाव निजवास;
अंधकार अज्ञानसम, नाशे ज्ञानप्रकाश ।९८।

जे जे कारण बंधनां, तेह बंधनो पंथ;
ते कारण छेदकदशा, मोक्ष-पंथ भवअंत ।९९।

राग, द्वेष अज्ञान ए, मुख्य कर्मनी ग्रंथ;
थाय निवृत्ति जेहथी, ते ज मोक्षनो पंथ ।१००।

आत्मा सत चैतन्यमय, सर्वाभास रहीत;
जेथी केवळ पामिये, मोक्षपंथ ते रीत ।१०१।

कर्म अनंत प्रकारनां, तेमां मुख्ये आठ;
तेमां मुख्ये मोहिनिय, हणाय ते कहुं पाठ ।१०२।

कर्म मोहिनिय भेद बे, दर्शन चारित्र नाम;
हणे बोध वीतरागता, अचूक उपाय आम ।१०३।

कर्मबंध क्रोधादिथी, हणे क्षमादिक तेह;
प्रत्यक्ष अनुभव सर्वने, एमां शो संदेह? ।१०४।

छोडी मत दर्शन तणो, आग्रह तेम विकल्प;
कह्यो मार्ग आ साधशे, जन्म तेहना अल्प ।१०५।

षट्पदनां षट् प्रश्न तें, पूछ्यां करी विचार;
ते पदनी सर्वांगता, मोक्षमार्ग निर्धार ।१०६।

जाति वेषनो भेद नहि, कह्यो मार्ग जो होय;
साधे ते मुक्ती लहे, एमां भेद न कोय ।१०७।

कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्ष अभिलाष;
भवे खेद अंतरदया, ते कहिये जिज्ञास ।१०८।

ते जिज्ञासु जीवने, थाय सद्‌गुरुबोध;
तो पामे समकीतने, वर्त्ते अंतर शोध ।१०९।

मतदर्शन आग्रह तजी, वर्त्ते सद्‌गुरुलक्ष;
लहे शुद्ध समकीत ते, जेमां भेद न पक्ष ।११०।

वर्त्ते निज स्वभावनो, अनुभव लक्ष प्रतीत;
वृत्ति वहे निजभावमां, परमार्थे समकीत ।१११।

वर्धमान समकीत थई, टाळे मिथ्याभास;
उदय थाय चारित्रनो, वीतरागपद वास ।११२।

केवल निजस्वभावनुं, अखंड वर्त्ते ज्ञान;
कहिये केवळ ज्ञान ते, देह छतां निर्वाण ।११३।

कोटि वर्षनुं स्वप्न पण, जाग्रत थतां शमाय;
तेम विभाव अनादिनो, ज्ञान थतां दुर थाय ।११४।

छूटे देहाध्यास तो, नहि कर्त्ता तुं कर्म;
नहि भोक्ता तुं तेहनो, एज धर्मनो मर्म ।११५।

एज धर्मथी मोक्ष छे, तुं छो मोक्ष स्वरुप;
अनंत दर्शन ज्ञान तुं, अव्याबाध स्वरुप ।११६।

शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन, स्वयं ज्योति सुखधाम;
बीजुं कहिये केटलुं, कर विचार तो पाम ।११७।

निश्चय सर्वे ज्ञानिनो, आवी अत्र शमाय;
धरी मौनता एम कहि, सहज समाधीमांय ।११८।

शिष्य बोधबीज प्राप्ति (गाथा ११९-१२७)

सद्गुरुना उपदेशथी, आव्युं अपूर्व भान;
निजपद निजमांही लह्युं, दूर थयुं अज्ञान ।११९।

भास्युं निज स्वरुप ते, शुद्ध चेतना रुप;
अजर अमर अविनाशि ने, देहातीत स्वरुप ।१२०।

कर्त्ता भोक्ता कर्मनो, विभाव वर्त्ते ज्यांय;
वृत्ति वही निजभावमां, थयो अकर्त्ता त्यांय ।१२१।

अथवा निजपरिणाम जे, शुद्ध चेतनारुप;
कर्त्ता भोक्ता तेह नो, निर्विकल्प स्वरुप ।१२२।

मोक्ष कह्यो निजशुद्धता, ते पामे ते पंथ;
समजाव्यो संक्षेपमां, सकल मार्ग निर्ग्रंथ ।१२३।

अहो! अहो! श्री सद्गुरु, करुणासिंधु अपार;
आ पामर पर प्रभु कर्यो, अहो! अहो! उपकार ।१२४।

शुं प्रभु चरण कने धरुं, आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभुए आपियो, वर्त्तुं चरणाधीन ।१२५।

आ देहादी आजथी, वर्त्तो प्रभु आधीन;
दास, दास हुं दास छुं, तेह प्रभुनो दीन ।१२६।

षट् स्थानक समजाविने, भिन्न बताव्यो आप;
म्यान थकी तरवारवत्, ए उपकार अमाप ।१२७।

उपसंहार (गाथा १२८-१४२)

दर्शन षटे शमाय छे, आ षट् स्थानक मांहि;
विचारतां विस्तारथी, संशय रहे न कांई ।१२८।

आत्मभ्रांति सम रोग नहि, सद्गुरु वैद्य सुजाण;
गुरु आज्ञा सम पथ्य नहि, औषध विचार ध्यान ।१२९।

जो इच्छो परमार्थ तो, करो सत्य पुरुषार्थ;
भवस्थिति आदी नाम लई, छेदो नहि आत्मार्थ ।१३०।

निश्चय वाणी सांभळी, साधन तजवां नोय;
निश्चय राखी लक्षमां, साधन करवां सोय ।१३१।

नय निश्चय एकांतथी, आमां नथी कहेल;
एकांते व्यवहार नहि, बन्ने साथे रहेल ।१३२

गछमतनी जे कल्पना, ते नहि सद्व्यवहार;
भान नहीं निजरुपनुं, ते निश्चय नहीं सार ।१३३।

आगळ ज्ञानी थई गया, वर्त्तमानमां होय;
थाशे काळ भविष्यमां, मार्ग भेद नहिं कोय ।१३४।

सर्व जीव छे सिद्ध सम, जे समजे ते थाय;
सद्गुरु आज्ञा जिनदशा, निमित्त कारणमांय ।१३५।

उपादाननुं नाम लई, ए जे तजे निमित्त,
पामे नहिं सिद्धत्वने, रहे भ्रांतिमां स्थित ।१३६।

मुखथी ज्ञान कथे अने, अंतर छुट्यो न मोह;
ते पामर प्राणी करे, मात्र ज्ञानिनो द्रोह ।१३७।

दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, वैराग्य;
होय मुमुक्षु घट विषे, एह सदा सुजाग्य ।१३८।

मोह भाव क्षय होय ज्यां, अथवा होय प्रशांत;
ते कहिये ज्ञानी दशा, बाकी कहिये भ्रांत ।१३९।

सकल जगत ते एठवत, अथवा स्वप्न समान;
ते कहिये ज्ञानीदशा, बाकी वाचा ज्ञान ।१४०।

स्थानक पांच विचारिने, छठ्ठे वर्त्ते जेह;
पामे स्थानक पांचमु, एमां नहि संदेह ।१४१।

देह छतां जेनी दशा, वर्त्ते देहातीत;
ते ज्ञानीनां चरणमां, हो! वंदन अगणीत ।१४२।